भाषा सीखने सम्बन्धी अलग-अलग ज़रूरतों वाले बच्चों के लिए उपयोगी कक्षाएँ

सोनाली नाग

कल्पना कीजिए कि भाषा सीखने की प्रक्रिया एक ऐसे लम्बे वाक्य की तरह है जिसमें अनेक शब्द हैं। अब एक ऐसे अदृश्य हाथ की कल्पना करें जो वाक्य में कुछ शब्दों को बदल देता है, या कि कुछ शब्दों को गायब ही कर देता है। ऐसा हस्तक्षेप कई बार वाक्य में बहुत छोटा-सा बदलाव करता है,पर कई बार यह बदलाव वाक्य का अर्थ ही बदल देता है। जैसे किसी वाक्य में 'और' या 'यह' जैसे शब्दों को छोड़ देने से वाक्य पर अपेक्षाकृत कम प्रभाव पड़ेगा। लेकिन किसी वाक्य में 'डीड' (कृत्य) के स्थान पर 'नीड' (आवश्यकता) या 'राइम' (तुक) के स्थान पर 'रोट' (रट्टा) रखने से अर्थ ही बदल जाएगा। अब कल्पना कीजिए कि ऐसा हर परिवर्तन उन सम्भव तरीकों में से है जिनके द्वारा 'जीन्स' (आनुवांशिक इकाइयाँ) तथा मस्तिष्क की क्रियाएँ भाषा सीखने की प्रक्रिया को बाधित करती हैं। भाषा के विकास पर इनका प्रभाव भी विविध प्रकार का होता है। कुछ व्यवधान छोटे होते हैं और आसानी से दूर किए जा सकते हैं। पर कुछ ऐसे भी होते हैं जो भाषा सीखने की यात्रा में ऐसी बड़ी खाइयाँ बना देते हैं। ये खाइयाँ स्कूली वर्षों के काफ़ी बाद तक बच्चे के साथ बनी रहती हैं। विरासत में मिली जैविक सम्पदा गहरे रूप से उन मार्गों को आकार देती है जो बाद में भाषा का उपयोग करने की प्रतिभा और कौशलों तक ले जाते हैं।

लेकिन केवल जैविक आधार और नैसर्गिक क्षमता ही वे छिपे हुए हाथ नहीं हैं जो भाषा सीखने की प्रक्रिया को आकार देते हैं। भाषा सीखने की प्रक्रिया में कुछ और व्यवधानों की कल्पना कीजिए। ये उन तरीक़ों से पैदा होते हैं जिनका उपयोग हम अपने बच्चों को पढ़ाने के लिए करते हैं। अध्यापन में कुछ छोटी भूलें होती हैं जो किन्हीं अन्य सहज और शायद सांयोगिक अनुभवों से स्वतः दुरुस्त हो जाती हैं। परन्तु भाषा शिक्षण की कुछ योजनाबद्ध पद्धतियाँ जिस तरह से सीखने की प्रक्रिया से जुड़ती हैं उसके कारण उनके प्रभाव बड़ी दूर तक जाते हैं। हो सकता है कि अध्यापन की कुछ भूलों से अर्थ और उद्देश्य में थोड़ा ही अन्तर आए, लेकिन कुछ अन्य हस्तक्षेप गम्भीर रूप से विनाशकारी हो सकते हैं। भाषा शिक्षण के हर स्तर पर अपनाए गए पाठ्यक्रम से बच्चे की पूरी भाषायी सम्भावना की अभिव्यक्ति प्रभावित होती है।

यह प्रकृति और परवरिश के बीच युगों से चली आ रही खींचतान है : वह सम्भावना जिसे लेकर बच्चा सीखने की परिस्थिति में आता है, और वह अवसर जो उस सम्भावना की अभिव्यक्ति के लिए निर्मित किया जाता है। परन्तु यह तो करीब-करीब निश्चित प्रतीत होता है कि भाषा-शिक्षण के कुछ तरीके बच्चों के भाषा सीखने को बारीकियों और निपुणता के और ऊँचे स्तरों तक ले जा सकते हैं। शैक्षणिक हस्तक्षेपों पर कई दशकों से हो रहे शोधकार्यों से

प्रकट होता है कि यह बात विशेष शैक्षणिक आवश्यकताओं वाले बच्चों के लिए भी सत्य है। सबसे बुनियादी स्तर पर सबको समाहित करने वाला भाषा सीखने का वातावरण ऐसा ही होता है। मैं इसे परिभाषित करने का प्रयास करूँगी। पर सबसे पहले देखें कि विशेष आवश्यकताओं वाले बच्चे कौन हैं?

शैक्षणिक आवश्यकताओं के भेद

भाषा, सीखने और संज्ञान सम्बन्धी विकासात्मक विकारों वाले बच्चे कक्षा में अपनी विशेष आवश्यकताओं के कारण शायद सबसे आसानी से पहचाने जाते हैं। उनकी दिक़्क़तों के स्वरूप के आधार पर ऐसे बच्चों के विकारों का निदान इस प्रकार किया जा सकता है : डिस्लैक्सिया, स्पैसिफिक लैंग्वेज इंपेयरमैंट (विशेष भाषायी दुर्बलता), 'अटैंशन डेफिसिट सिण्ड्रोम' (ध्यान की कमी के लक्षण), या 'ऑटिज़्म स्पेक्ट्रम डिसॉर्डर्स' में से कोई।

ऐसे कुछ बच्चों को सरल वाचन और हिज्जे सीखने में संघर्ष करना पड़ सकता है। कुछ तो जटिलता और गहराई में किसी भी स्तर के शब्द से सम्पर्क बनाने में असमर्थ ही बने रहते हैं। अनेक चिकित्सकीय समस्याओं की प्रतिकूल छाया भी भाषा सीखने की प्रक्रिया पर पड़ सकती है। उदाहरण के लिए, 'एपीलेप्सी' (मिर्गी), 'न्यूरोफाइब्रोमैटोसिस' और 'मेनिन्जाइटिस' जैसी व्याधियाँ बच्चों के लिए भाषा की छोटी-छोटी जानकारियों पर ध्यान दे पाना मुश्किल बना सकती हैं। इन्द्रियगत दुर्बलताएँ, जैसे कमज़ोर नज़र और संवाहक श्रवण क्षति के कारण भी बाधा आ सकती है। अन्त में जिन बच्चों का सामाजिक-भावनात्मक जीवन एक सतत संघर्ष हो वे भी भाषा सीखने के संवादात्मक और पारस्परिक आदान-प्रदान वाले पहलुओं से जुड़ने में अपने को असमर्थ महसूस कर सकते हैं। ऊपर दी गई सूची कतई सम्पूर्ण नहीं है। पर इससे उन विशेष आवश्यकताओं का ठीक परिचय मिलता है जिनके लिए भावना और आचरण में सर्वहितकारी कक्षाओं की दरकार होती है।

कक्षाओं में हमारे रोजमर्रा के आचरण भी अपने पीछे कुछ अन्य समस्याएँ छोड़ जाते हैं। कोलकाता के हृदय में स्थित जोधपुर पार्क में एक कक्षा रोज़मर्रा की दिनचर्या से गूँज रही है। भाषा का एक पाठ चल रहा है और बच्चे समवेत स्वर में एक बांग्ला निबन्ध को ज़ोर से पढ़ रहे हैं। पर अनेक आवाज़ों के आरोह-अवरोह भी उस पाठ से उनके जुड़ाव की सपाट नीरसता को ढाँक नहीं पाते। और ऐसे ही वाचन की अनुगूँज शहर की अन्य कक्षाओं में सुनाई देती है। भीतरी ग्रामीण क्षेत्रों में तो यह आवाज़ और भी तेज़ हो जाती है। इस और ऐसी तमाम दिनचर्याओं के बाद पीछे बच रहते हैं हमारी कल्पना से भी अधिक तादाद में ऐसे बच्चे जो पढ़ने-लिखने में संघर्ष कर रहे होते हैं, हालाँकि उनकी भी शुरुआत अच्छी हुई थी और वे सीखने के लिए तैयार थे। ये वे बच्चे हैं जो कक्षा 3 में अपने नाम भी पढ़ने में असफल रहते हैं, जो कक्षा 5 में भाषा की हर परीक्षा के पहले प्रत्येक वाक्य को याद कर लेते हैं, और कक्षा 7 में पंक्तियों के बीच छिपे हुए अर्थ की बारीकियों को नहीं पकड़ पाते। ये वे बच्चे हैं जिन्होंने शायद अपना स्कूली सफ़र बिना किन्हीं खास ज़रूरतों के शुरू किया होगा पर जो अपनी पाठ्यपुस्तकों के हर पलटते हुए पृष्ठ के साथ पीछे, और फिर और पीछे छूटते गए हैं।

अपार संख्या में ऐसे बच्चे हैं जिनकी नैसर्गिक भाषायी क्षमता को ऐसी धुँधली अभिव्यक्ति मिल पाती है। मैं इन्हीं की पृष्ठभूमि में सबके हितों को समाहित करने वाली कक्षाओं को इस तरह परिभाषित करना चाहूँगी : सिखाने-सीखने का ऐसा वातावरण जो बच्चों के बीच में सभी स्तरों के अन्तर - चाहे वे अन्तर उनके चिकित्सकीय इतिहास की उपज हों या शैक्षणिक इतिहास की - होने पर भी सबके लिए सहायक होता है।

विविधताओं के साथ काम करना

संज्ञानात्मक प्रक्रियाओं की शृंखलाएँ भाषायी गतिविधियों में बच्चे के प्रदर्शन में योगदान देती हैं। इन संज्ञानात्मक प्रक्रियाओं को ऐसे मार्गों की तरह देखा जा सकता है जिनके माध्यम से मस्तिष्क का तथाकथित यांत्रिक उपकरण अपने को कक्षा में प्रकट करता है। ये संज्ञानात्मक प्रक्रियाएँ मस्तिष्क के जटिल कार्यों को रोज़मर्रा की भाषायी अभिव्यक्ति - कविता सुनाने और शुद्ध लेखन परीक्षाओं से लेकर कहानी लिखने और पुस्तक समीक्षा करने तक - में रूपान्तरित कर देती हैं। यदि हम बड़ी संख्या में बच्चों का ऐसे कामों में मूल्यांकन करें जिनमें इन संज्ञानात्मक प्रक्रियाओं में से किसी एक की ज़रूरत पड़ती हो, तो हम पाएँगे कि इनमें एक बड़ा समूह औसत दर्जे का प्रदर्शन करने वाले बच्चों का है, थोड़े-से अच्छा करने वाले हैं, और थोड़े -से हैं जिनका प्रदर्शन अत्यन्त शोचनीय है। इन संज्ञानात्मक प्रक्रियाओं में बच्चों की अभिव्यक्तियों के सतत मूल्यांकन को एक रैखिक पैमाने के रूप में देखने से यह सुनिश्चित हो जाएगा कि विशेष शैक्षणिक सहयोग की शुरुआत पहले से (किन्हीं खास बच्चों की) व्याधियों का निदान तय कर देने से नहीं होगी। इसके बजाय जो भी बच्चा कौशल के इस पैमाने पर नीचे फिसलने लगे, उसकी फ़िक्र किए जाने की ज़रूरत हो सकती है।

वे बच्चे जिन पर किसी चिकित्सकीय व्याधि के निदान का ठप्पा लगा होता है, संज्ञानात्मक प्रक्रियाओं के किसी खास समूह में अक्षमता दर्शाते हैं। मिसाल के लिए 'डिस्लेक्सिया' से ग्रस्त बच्चों को भाषा की आवाज़ों को पकड़ने और उनसे खेलने में बहुत कठिनाई होती है। इसके कारण वे निरन्तर आवाज़ों का 'लेटर्स' (अँग्रेज़ी) और अक्षरों से तालमेल बिठाने का संघर्ष करते रहते हैं, और परिणामस्वरूप पढ़ने और हिज्जे (स्पैलिंग) करने में बार-बार गलतियाँ करते हैं। दूसरी ओर, भाषा के व्याकरण से जुड़ी संज्ञानात्मक प्रक्रियाओं का कमज़ोर होना, और संसार को शब्द-नामों से चिन्हित करने के लिए आवश्यक शब्द-भण्डार जुटाने में कठिनाई महसूस करना - ये 'स्पेसिफिक लैंग्वेज इम्पेयरमेन्ट' (एस.एल.आई. - किसी खास भाषा में कमज़ोरी) से ग्रस्त बच्चों को पहचानने के लक्षण हैं। भाषा के इन अपेक्षाकृत अधिक व्यापक कौशलों की दुर्बलता से ऐसे बच्चे समझने में - जब वे सुनते हैं या लिखते हैं, दोनों ही में - कमज़ोर होते हैं। 'अटैंशन डेफिसिट डिसॉर्डर्स' (ए.डी.डी. - ध्यान में कमी की बीमारियाँ) में संज्ञानात्मक प्रक्रियाओं का एक और समूह भाषा सीखने के दौरान नदारद रहकर गड़बड़ियाँ करता है। जैसा कि इसके नाम से जाहिर है, एडीडी से पीड़ित बच्चे को अपना ध्यान साधने में बहुत ज़्यादा कठिनाई होती है। इसका मतलब है न केवल सीखने के किसी सबक़ पर ध्यान केन्द्रित करने में असमर्थ होना, बल्कि उस नियंत्रण शक्ति का भी दुर्बल होना जो चित्त को इधर-उधर की

मौजूद चीज़ों पर भटकने से रोकने के लिए ज़रूरी है। ए.डी.डी. से प्रभावित बच्चा शायद 'डिस्लेक्सिया' से ग्रस्त बच्चे की तुलना में पढ़ना और सही लिखना ज़्यादा अच्छे से सीख सकता है, और एसएलआई से पीड़ित बच्चे की अपेक्षा ज़्यादा अच्छी तरह से समझ सकता है, पर फिर भी हो सकता है कि वह उनसे कहीं ज़्यादा ग़लतियाँ करे, सिर्फ़ इसलिए कि भाषा-कार्य पर निगरानी रखने में चित्त के उतार-चढ़ाव होते रहते हैं।

विभिन्न रुग्ण दशाओं के इन लघु ख़ाकों का अभिप्राय उन तमाम संज्ञानात्मक प्रक्रियाओं को दिखाना है जो भाषा सीखने में शामिल रहती हैं, और यह भी कि कैसे इन क्षेत्रों में से किसी में भी कमज़ोरी होने से सीखने की प्रक्रिया धीमी पड़ सकती है। पर ये ख़ाके 'विशुद्ध' मामलों के हैं जो बिरले होते हैं। समस्याग्रस्त अनेक बच्चों की कमज़ोरियों का दायरा एक से अधिक निदानक्षेत्रों तक फैला रहता है। सबके हितों को समाहित करने वाली कक्षाओं के लिए इसका निहितार्थ यह है कि सबसे अच्छा तरीक़ा बच्चों को ऐसे सीखने वालों की तरह देखना है जिनके सभी कौशलों को उकसाये जाने और सहारा दिए जाने की ज़रूरत होती है।

चिकित्सकीय रूप से निदान की गई समस्याओं से ग्रस्त बच्चों को निश्चित रूप से गहन सहायता की ज़रूरत होती है। अलग-अलग बच्चों को उनके अनुकूल सहायता देने का सबसे अच्छा तरीक़ा ऐसे कार्यक्रम हैं जिनमें उन्हें कक्षा से बाहर निकालकर विशेष संसाधनों से युक्त कमरे में उनके साथ काम किया जाता है। परन्तु किसी स्कूल में अलग निकालकर सहायता देने के ऐसे कार्यक्रम की व्यवस्था कर देने से सर्वहितकारी कक्षा की आवश्यकता किसी भी प्रकार कम नहीं हो जाती। ऐसा इसलिए क्योंकि नए कौशलों और परिस्थितियों से निपटने के नए तरीक़ों का अभ्यास विभिन्न स्तरों की योग्यता वाले बच्चों से भरी हुई कक्षा में ही किया जा सकता है। हालाँकि, सर्वहितकारी कक्षा एक और ऐसी जगह मात्र नहीं है जहाँ बच्चों को अपने कमज़ोर कौशलों को मजबूत बनाने का अवसर मिलता है। वास्तव में सर्वहितकारी कक्षा ही एक मात्र ऐसा तरीक़ा है जिसके द्वारा स्कूल बच्चे को सीखने सम्बन्धी कुछ कमियों का पिटारा न बनने देकर उसके समूचे व्यक्तित्व का पोषण कर सकता है।

अभ्यास सहायक होता है, पर विविधता और भी ज़्यादा सहायक होती है

कई दशकों से हो रहे तंत्रिका विज्ञान के शोधों से यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि नई बातें सीखने के कई संज्ञानात्मक मार्ग शिक्षण के प्रयासों से प्रभावित होते हैं। यह नया सीखना हिज्जे के सूत्रों को पकड़ने, नए शब्दरूपों के नियमों को समझने, या अप्रत्याशित रूप से जटिल अनुच्छेदों का निहितार्थ निकालने के लिए हो सकता है। हालाँकि इन नई परिस्थितियों में परिपूर्ण रूप से कैसे सफल हुआ जा सकता है, इसे लेकर कई दृष्टिकोण हैं। पर किए गए प्रयासों पर हुए शोध से काफ़ी हद तक यह सहमति बनती है कि निरन्तर अभ्यास ही सबसे अधिक कारगर होता है। परन्तु इस सीधे और स्वतः स्पष्ट सत्य से होने वाले लाभ तब नहीं मिलते जब अभ्यास का मतलब महज़ यांत्रिक, और फिर-फिर दोहराया जाने वाला कार्य मान लिया जाता है। किसी शब्द के हिज्जे (स्पैलिंग) सीखने के लिए बच्चों से उसे 25 बार लिखने को कहना ग़लत अभ्यास का एक उदाहरण है। ये कृत्रिम कसरतें हैं जिनसे सीखने में कुछ प्रारम्भिक लाभ होते

हैं, लेकिन लम्बे समय तक चलने पर ये भाषा की छानबीन करने और उसके साथ खेलने की बच्चे की स्वस्फूर्त इच्छा को कुंठित कर देती हैं। इसमें सन्तुलित विकास तब होता है जब कल्पनाशील शिक्षक अभ्यास को विविधता के पूरे दायरे में बदल-बदल कर करवाते हैं।

अतः भाषा की सर्वहितकारी कक्षा ऐसे शैक्षणिक वातावरण से बनती है जो उन नैसर्गिक क्षमताओं और मुश्किलों के लिए अनुकूल होता है जिनके साथ बच्चे भाषा सीखने का काम करते हैं। इतनी ही महत्त्वपूर्ण बात यह भी है कि यह माहौल किसी कार्य के प्रति बच्चों की भावनाओं और अन्त:प्रेरणाओं के अनुरूप भी होता है।

सर्वसमाहित ढंग से कार्य करना

सर्वहितकारी कक्षा के ढाँचे में ही लचीलापन होता है। इन कक्षाओं में एक पहले से निर्धारित, बन्द कार्ययोजना में ढल जाने की अपेक्षा खुलापन दिखाई देता है। निम्न तीन क्षेत्रों में खुलापन कक्षा को और अधिक व्यापक बनाता है और इस परिवर्तन को महसूस किया जा सकता है।

1. **प्रत्येक बच्चे के लिए सही वर्कशीट**

जब आप किसी विषय पर अपने पाठों की योजना बना रहे हों तो अपेक्षा से एक क़दम आगे जाकर विविध प्रकार की वर्कशीट विकसित करें। किसी वर्कशीट में अतिरिक्त प्रश्न जोड़कर उसे उन बच्चों के लिए चुनौतीपूर्ण बनाया जा सकता है जो शेष समूह से तेज़ हैं। रेखाचित्रों, प्रवाहचित्रों और मानसिक नक्शों के द्वारा जानकारी प्रदान करने वाली सचित्र वर्कशीट उन बच्चों के लिए सहायक होती हैं जो किसी अनुच्छेद के विभिन्न बिन्दुओं के पारस्परिक सम्बन्धों को लेकर भ्रमित हो जाते हैं। ऐसी वर्कशीट जो जानकारी को क्रमवार चिन्हित बिन्दुओं के रूप में प्रस्तुत करती हैं, उन बच्चों के लिए मददगार होती हैं जिन्हें लम्बे अनुच्छेदों को पढ़ने में संघर्ष करना पड़ता है।

2. **प्रत्येक बच्चे के लिए सही गृहकार्य**

विशेष आवश्यकताओं वाले बच्चों को अक्सर दूसरे बच्चों की तुलना में कई घण्टे ज़्यादा काम करना पड़ता है। उन्हें कक्षाकार्य समाप्त करने के लिए आमतौर पर अधिक समय की ज़रूरत होती है। घर के लिए दिए गए काम को पूरा करने में भी उन्हें ज़्यादा समय लगता है। ऐसा चलते रहने से, उनके पास बचने वाला खाली समय क्रमशः घटता जाता है। शिक्षक यह सुनिश्चित करके इसमें मदद कर सकते हैं कि प्रत्येक बच्चे को दिए गए गृहकार्यों की लम्बाई उसके काम करने की गति के अनुरूप हो। जब शिक्षक इस तरीके से बच्चों के कार्य पर निगरानी रखेंगे तो कुछ बच्चों को दूसरों से कम गृहकार्य मिलेगा।

3. **प्रत्येक बच्चे के लिए सही परीक्षा**

जहाँ मूल्यांकन की एकमात्र पद्धति लिखित परीक्षाएँ होती हैं, वहाँ सभी बच्चे अपने सीखे हुए ज्ञान को प्रदर्शित नहीं कर पाते। हो सकता है कि कुछ बच्चे मौखिक परीक्षा में बेहतर प्रदर्शन कर सकें। फिर कुछ ऐसे बच्चे होते हैं जो तेज़ गति से काम करने के दबाव की स्थिति में

खराब प्रदर्शन करते हैं, पर उन्हें तब अधिक अंक प्राप्त होते हैं जब परीक्षा पर समय की बंदिश नहीं रहती। परीक्षण की विभिन्न स्थितियों में किए जाने वाले मूल्यांकन प्रत्येक बच्चे की क्षमताओं और कमज़ोरियों के प्रति संवेदनशील हो सकते हैं। अध्यापक बच्चों के काम का लेखा-जोखा रखकर उन्हें अपना सीखा ज्ञान प्रदर्शित करने के अधिक अवसर प्रदान कर सकते हैं। ऐसा लेखा-जोखा बच्चों के लिखित और मौखिक परीक्षाओं में प्रदर्शन, शोध-आधारित कार्य और अपने हाथों से किए गए प्रायोगिक कार्य, अपने हिसाब से तय की गई गति से किए गए कार्य और समयसीमा वाली स्थितियों में किए गए कार्य के क्रमिक विवरणों को एकत्रित करके बनता है।

सोनाली नाग एक क्लिनिकल साइकॉलॉजिस्ट हैं। उनकी दिलचस्पी संज्ञानात्मक तंत्रिका विज्ञान में है। वे द प्रॉमिस फाउण्डेशन, बेंगलूरु में सहनिदेशक, तथा यॉर्क विश्वविद्यालय, यू.के. के *सेन्टर फॉर रीडिंग एण्ड लैंग्वेज* में रिसर्च फेलो हैं। उनसे sonalinag@t-p-f.org पर सम्पर्क किया जा सकता है।

यह *Learning Curve, Issue XIII (Language Learning)* अक्टूबर,2009 में प्रकाशित लेख Inclusive Classroom for Children with Different Language Learning Needs का हिन्दी अनुवाद है।

अनुवाद : सत्येन्द्र त्रिपाठी **पुनरीक्षण एवं सम्पादन** : राजेश उत्साही